

ग्रामीण एवं शहरी कार्यरत महिलाओं में भूमिका संघर्ष: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

पिंकी

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, बी डी एम एम गर्ल्स डिग्री कॉलेज,
शिकोहाबाद (उत्तर प्रदेश) E-mail: <pinky161990@gmail.com>

सारांश

प्रस्तुत शोधपत्र कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति का ग्रामीण एवं शहरी परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। वर्तमान आधुनिक समाज में महिलाओं की शिक्षा एवं रोजगार के क्षेत्र में बढ़ती भागीदारी ने उनके पारिवारिक तथा व्यावसायिक दायित्वों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने की चुनौती को अधिक जटिल बना दिया है। विश्व बैंक सहित विभिन्न संस्थाओं के आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि महिला श्रमबल की भागीदारी निरन्तर बढ़ रही है। कार्यरत महिलाएँ पेशेवर कर्मचारी, गृहिणी, माता, पत्नी तथा बहू जैसी बहुआयामी भूमिकाओं का एक-साथ निर्वहन करती हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनमें भूमिका संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। समय-प्रबन्धन की कठिनाइयाँ, कार्यस्थल का दबाव, पारिवारिक अपेक्षाएँ, पितृसत्तात्मक संरचना तथा पारम्परिक सामाजिक मानदण्ड इस संघर्ष को और अधिक तीव्र बनाते हैं। द्वितीयक आँकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि भूमिका संघर्ष का प्रभाव ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों में महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य, कार्यक्षमता, कार्य-सन्तुष्टि तथा पारिवारिक सम्बन्धों पर पड़ता है। इसके परिणामस्वरूप तनाव, थकान, असन्तोष तथा अपराध बोध जैसी समस्याएँ उभरती हैं। प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिसमें विभिन्न शोध लेखों, पुस्तकों तथा सरकारी एवं गैर-सरकारी रिपोर्टों का उपयोग किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में कार्यरत महिलाओं के भूमिका संघर्ष की प्रकृति एवं उसके सामाजिक कारणों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करना है।

प्रमुख शब्द

[कामकाजी महिलाएँ, भूमिका संघर्ष, महिला श्रम सहभागिता, कार्य-जीवन सन्तुलन, पारिवारिक दायित्व।]

Centre For Studies of National Development, Meerut

Editorial Office : D-59, Shastri Nagar, Meerut - 250 004 (INDIA)

Ph. : 0121-2763765, +91-9997771669, +91-9412200765

1

ग्रामीण एवं शहरी कार्यरत महिलाओं में भूमिका संघर्ष: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

1. प्रस्तावना

वर्तमान आधुनिकीकृत समाज में महिलाओं ने अपने कार्यक्षेत्र का दायरा विस्तृत किया है। आज वे प्रत्येक क्षेत्र में अपनी सेवाएँ व उपस्थिति बनाए हुए हैं। विश्व बैंक एवं अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के आँकड़ों के अनुसार, वैश्विक स्तर पर कुल कार्यबल में महिलाओं की हिस्सेदारी लगभग 40% है। वहीं, भारत सरकार के सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मन्त्रालय की आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार भारत में महिला श्रम बल भागीदारी दर लगभग 40% से 41.7% के स्तर पर पहुँच गई है (2023-24)।

तालिका-1: वैश्विक एवं भारतीय स्तर पर महिला श्रम बल भागीदारी

महिला श्रम बल भागीदारी: वैश्विक एवं भारतीय परिदृश्य	आँकड़े
वैश्विक स्तर (विश्व बैंक एवं आईओएलओ के अनुसार)	कुल कार्यबल में महिलाओं की हिस्सेदारी लगभग 40%
भारत (आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मन्त्रालय)	महिला श्रम बल भागीदारी दर लगभग 40% - 41.7%

स्रोत: विश्व बैंक (World Bank), अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) तथा सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मन्त्रालय (MoSPI), आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (PLFS) – (2023-24)।

उपर्युक्त आँकड़े स्पष्ट करते हैं कि महिलाओं की श्रम भागीदारी में वृद्धि वैश्विक ही नहीं अपितु भारतीय सन्दर्भ में भी स्पष्ट प्रतीत होती है। रोजगार के कारण कामकाजी महिलाओं को मानसिक सन्तुष्टि, आत्मविश्वास, व्यक्तित्व विकास एवं आर्थिक स्वावलम्बन के अवसर प्राप्त हुए हैं किन्तु पारिवारिक व्यवस्था व प्रणाली ने कोई विशेष बदलाव नहीं किए हैं। परिवार की अपेक्षाओं का दबाव महिलाओं को परिवार के सदस्यों के नकारात्मक रवैए के रूप में सहन करना पड़ता है। आधुनिकीकरण के परिणामस्वरूप नए मूल्य, विचार, मान्यताएँ, विश्वास, आवश्यकताएँ, व्यवहार व प्रतिबन्धों के कारण महिलाओं के लिए अपनी भूमिकाओं का निर्वहन चुनौतीपूर्ण होता जा रहा है (कुमार, 2024)। जैसाकि आँकड़े बताते हैं कि भारतीय महिलाओं का कार्यबल में हिस्सा तेजी से बढ़ रहा है किन्तु सामाजिक-सांस्कृतिक स्वीकृति से जुड़ी गहरी समस्याओं का पर्याप्त समाधान नहीं हो पा रहा है, परिणामस्वरूप महिलाएँ अपने जीवन में दोहरे बोझ से दबी हुई हैं। इस दोहरे बोझ के कारण वे अपने स्वास्थ्य व करियर को नजरअन्दाज कर देती हैं। देर से विवाह का निर्णय तथा बच्चे पैदा करने व पालन पोषण करने इत्यादि के कारण उनमें तनाव एवं अन्य बीमारियाँ उत्पन्न हो रही हैं (रानी एवं त्यागी, 2020)।

विश्व बैंक के डाटा बैंक के अनुसार महिला कार्यबल के अन्तर्गत 15 या उससे अधिक आयु की वे सभी महिलाएँ, जो वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन के श्रम की आपूर्ति करती हैं, सम्मिलित हैं। भारत के सन्दर्भ में, कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध एवं निवारण) अधिनियम, 2013 के अनुसार कार्यस्थल में सार्वजनिक या निजी क्षेत्र, संगठित या असंगठित क्षेत्र के सभी स्थान सम्मिलित हैं।

भूमिका संघर्ष से तात्पर्य, जैसा कि राल्फ लिण्टन कहते हैं कि एक ही समय में दो असंगत भूमिकाओं का एक-साथ उपस्थित होना तथा दोनों के ही निर्वहन या पूरा करने की आशा करना, भूमिका संघर्ष की स्थिति को उत्पन्न करता है। मर्टन कहते हैं कि एक व्यक्ति जब एक-साथ कई सामाजिक भूमिका निभाता है तथा इन भूमिकाओं की अपेक्षाएँ परस्पर विरोधी होती हैं तो भूमिका संघर्ष उत्पन्न होता है।

विलियम जे0 गुडे भूमिका तनाव सिद्धान्त (Role strain Theory) के माध्यम से बताते हैं कि सीमित संसाधनों के कारण व्यक्ति अपनी सभी भूमिकाओं को समान रूप से निभाने में असमर्थ होता है जिससे तनाव एवं संघर्ष उत्पन्न होता है। भारतीय समाज में अधिकांशतया महिलाओं से परिवार एवं नौकरी दोनों के उचित निर्वहन की अपेक्षा की जाती है। वर्तमान में एक कहावत है कि महिला चाँद पर अवश्य जाएँ लेकिन पहले चाँद जैसी गोल रोटी बनाकर जाएँ। महिलाओं के लिए भूमिका संघर्ष की स्थिति उत्पन्न करने वाले इस तरह की कई सामाजिक व सांस्कृतिक बाधाएँ सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त, कई बार स्वयं महिलाएँ भी सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप 'आदर्श ग्रहणी' एवं 'सफल पेशेवर' दोनों भूमिकाओं को पूरी तरह से निभाने का प्रयास करती हैं जिससे उन पर मानसिक एवं शारीरिक दबाव पड़ता है, साथ ही दूसरी महिलाओं के लिए उदाहरण बनने का भी कार्य करती हैं जिसका प्रभाव दूसरी महिलाओं पर पड़ता है। परिवार या संस्थान उन्हें उन जैसा बनने की अपेक्षा करते हैं, जबकि प्रत्येक व्यक्ति की कार्य क्षमता व प्रबन्धन अलग-अलग होता है।

2. साहित्यावलोकन

कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष विषय पर विभिन्न विद्वानों एवं शोधकर्ताओं ने अध्ययन किया है। इस सन्दर्भ में उपलब्ध साहित्य स्पष्ट करता है कि महिलाओं की बहुआयामी भूमिकाएँ उनके जीवन में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न करती हैं, विशेष रूप से तब, जब वे पारिवारिक एवं व्यावसायिक उत्तरदायित्वों का एक-साथ निर्वहन करने का प्रयास करती हैं।

जैफ्री एच0 ग्रीनहॉस एवं निकोलस जी0 ब्रूटल कार्य परिवार संघर्ष (Work family conflict) की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए बताते हैं कि कार्य एवं परिवार भूमिकाओं के बीच असंगति के कारण तनाव उत्पन्न होता है। वहीं भारतीय महिला समाजशास्त्री नीरा देसाई (1994) ने महिलाओं की बदलती सामाजिक स्थिति का विश्लेषण करते हुए बताया कि शिक्षा एवं रोजगार के अवसर बढ़ने के बाद भी घरेलू दायित्वों में कोई कमी नहीं आई है जिससे महिलाओं पर दोहरे बोझ की स्थिति बनी रहती है, वही लीला दुबे पारिवारिक संरचना एवं लैंगिक भूमिकाओं के विश्लेषण में कहती हैं कि भारतीय समाज में महिलाओं से पारम्परिक भूमिकाओं का निर्वहन की अपेक्षा आज भी बनी हुई है। उषा नायर (2007) ने भूमिका संघर्ष का महिलाओं पर मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव का अध्ययन किया है। उनके शोध निष्कर्ष से स्पष्ट हुआ कि कार्य एवं परिवार के बीच सन्तुलन बनाने में असफलता के कारण महिलाओं में तनाव, थकान तथा असन्तोष की भावना उत्पन्न होती है। आशा, एल0 (2014) अपने शोध निष्कर्ष में बताती हैं कि कामकाजी महिलाएँ अपने परिवार एवं बच्चों के अच्छे भविष्य के साथ-साथ खुद की पहचान की चाह उन्हें कार्यबल का हिस्सा बनने के लिए सकारात्मकता प्रदान करती है। आगे वह अपने शोध निष्कर्ष में बताती हैं कि उच्च संस्थानों में कार्यरत महिलाएँ परिवारजनों एवं घरेलू सहायिका की सहायता से भूमिका संघर्ष की स्थिति को कम सामना करती हैं बजाय छोटे संस्थानों व असंगठित क्षेत्र के संस्थानों में कार्यरत महिलाओं के। शालिनी सिंह (2018) अपने शोध पत्र में कहती हैं कि शहरी कार्यरत महिलाओं को समय प्रबन्धन, कार्यस्थल के दबाव तथा पारिवारिक अपेक्षाओं के कारण निरन्तर भूमिका संघर्ष का सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार, पूजा शर्मा (2020) ने अपने अध्ययन में पाया कि कार्यरत महिलाओं में भूमिका संघर्ष एक सार्वभौमिक समस्या है जो उनके मानसिक स्वास्थ्य, कार्य सन्तुष्टि एवं पारिवारिक सम्बन्धों को प्रभावित करती है।

उपर्युक्त दिए गए संक्षिप्त साहित्यावलोकन हमें एक महत्वपूर्ण शोध अन्तराल (Research Gap) की ओर ले जाता है। इस साहित्य की समीक्षा से यह स्पष्ट है कि कई पूर्ववर्ती अध्ययनों में कामकाजी महिलाओं में

भूमिका संघर्ष, भूमिका तनाव, कार्य-परिवार संघर्ष, पारम्परिक लैंगिक भूमिकाओं, समय प्रबन्धन तथा मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का विस्तृत अध्ययन किया गया है। तथापि, वर्तमान के बदलते परिदृश्य में कई बिन्दुओं पर अध्ययन की कमी दिखाई देती है, जिसमें कार्य के बदलते स्वरूप एवं डिजिटल तकनीक का प्रभाव प्रमुख है। वर्तमान में 'वर्क फ्रॉम होम', 'हाइब्रिड मॉडल' एवं 'डिजिटल तकनीक' के कारण पारम्परिक कामकाजी माहौल में एक बड़ा बदलाव आया है। इसके साथ ही, वर्तमान समय के एकल परिवारों तथा पति की सह-भागीदारी के बदलते दृष्टिकोण का गहन अध्ययन आवश्यक हो गया है।

अतः, प्रस्तुत शोध पत्र के अन्तर्गत इन अछूते पहलुओं का वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक विश्लेषण करने का एक प्रयास किया गया है।

3. अध्ययन के उद्देश्य

वर्तमान अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति का अध्ययन करना।
2. कामकाजी कार्यरत महिलाओं के पारिवारिक एवं व्यवसायिक दायित्वों के बीच उत्पन्न होने वाले संघर्षों का विश्लेषण करना।
3. ग्रामीण एवं शहरी कार्यरत महिलाओं में भूमिका संघर्ष के प्रमुख सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक कारणों की पहचान करना।
4. भूमिका संघर्ष का महिलाओं के मानसिक पारिवारिक एवं व्यवसायिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों को जानना।
5. भूमिका सन्तुलन स्थापित करने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

4. शोध पद्धति

प्रस्तुत शोध कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति का शहरी व ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है तथा शोध वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शैली पर आधारित है। इसमें द्वितीय स्रोतों का प्रयोग किया गया है जिसके अन्तर्गत विभिन्न शोध पत्रों सम्बन्धित पुस्तकों, जर्नल्स, पत्र-पत्रिकाएँ, सरकारी, गैर-सरकारी रिपोर्ट्स एवं विभिन्न प्रमाणित वेबसाइटों पर ऑनलाइन उपलब्ध आँकड़ों का इस्तेमाल किया गया है।

5. शोधात्मक परिप्रेक्ष्य

प्रस्तुत अध्ययन कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति को ग्रामीण एवं शहरी परिप्रेक्ष्य में समाजशास्त्रीय दृष्टि से समझने का प्रयास करता है। लिण्टन एवं मर्टन के अनुसार जब एक व्यक्ति एक-साथ अनेक सामाजिक भूमिकाओं का निर्वहन करता है तथा उन भूमिकाओं की अपेक्षाएँ परस्पर विरोधी हो जाती हैं, तब भूमिका संघर्ष उत्पन्न होता है। वर्तमान समाज में कार्यरत महिलाएँ पेशेवर कर्मचारी, माता, पत्नी एवं गृहिणी जैसी बहुआयामी भूमिकाओं का निर्वहन करती हैं, जिसके कारण उनमें भूमिका तनाव एवं संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। विलियम जे० गुडे की भूमिका तनाव सिद्धान्त (Role Strain Theory) यह स्पष्ट करता है कि सीमित समय एवं संसाधनों के कारण व्यक्ति सभी भूमिकाओं को समान रूप से निभाने में असमर्थ हो जाता है, साथ ही नारीवादी सिद्धान्तों के आधार पर भी महिला भूमिका संघर्ष को समझने का प्रयास किया गया है।

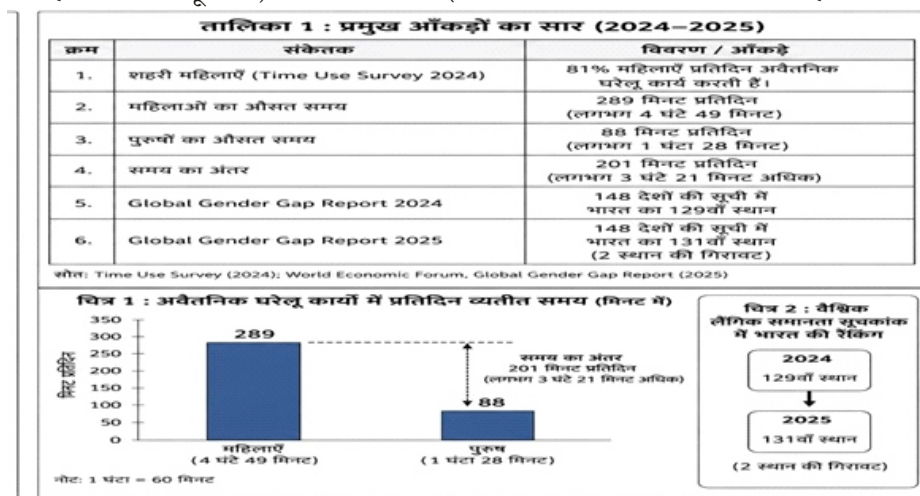
6. ग्रामीण महिलाओं में भूमिका संघर्ष

ग्रामीण परिप्रेक्ष्य की बात करें तो स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं में यह एक समान नहीं है बल्कि जातिगत एवं धर्म अनुसार बाध्याएँ या सीमितताएँ हैं। अनुसूचित जाति एवं जनजाति समुदायों में महिला श्रम

सहभागिता अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। अन्य जातियों की महिलाएँ अधिकतर घर के कार्यों में संलग्न रहती हैं किन्तु आधुनिकीकरण के चलते सभी वर्ग व जाति की महिलाएँ श्रम बल का हिस्सा बन रहे हैं (निशा श्रीवास्तव, 2019)। ग्रामीण अंचलों में कामकाजी महिलाओं को परम्परागत सामाजिक संरचना एवं पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण अधिक भूमिका संघर्ष का सामना करना पड़ता है। एक अध्ययन में पाया गया कि ग्रामीण महिलाएँ खेतों में काम करने के साथ-साथ घरेलू कार्यों को पूरी जिम्मेदारी भी निभाती हैं। अध्ययनों से यह भी स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का स्तर कम होने के कारण महिलाएँ अपने अधिकारों एवं विकल्पों के प्रति कम जागरूक होती हैं जिससे उनका भूमिका संघर्ष और बढ़ जाता है (अभिमन्यु कुमार, 2024)। वहीं एक दूसरा शोध बताता है कि शहरी महिलाओं की अपेक्षा ग्रामीण महिलाओं को भूमिका तनाव एवं भूमिका संघर्ष की स्थिति का अधिक सामना करना पड़ता है। उन्हें कार्यस्थल पर स्वीकार किए जाने से लेकर लैंगिक भेदभाव, भाषागत भेदभाव तथा परम्परागत आधुनिक मूल्यों में तालमेल न बिठा पाने के कारण भूमिका संघर्ष की स्थिति से अधिक गुजरना पड़ता है, जबकि शहरी कार्यरत महिलाओं को पारिवारिक सम्बन्धियों से समर्थन के साथ वह भूमिका संघर्ष से निपटने हेतु समय प्रबन्धन, प्रतिक्रियात्मक भूमिका व्यवहार तथा व्यक्तिगत भूमिका को पुनर्परिभाषित की रणनीतियों के बारे अधिक जानकारी थी जिससे वह भूमिका संघर्ष की स्थिति से निपटने में अधिक सक्षम थी (रानी एवं त्यागी, 2020)।

7. शहरी महिलाओं में भूमिका संघर्ष

ग्रामीण क्षेत्र की तुलना में शहरी क्षेत्र की महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति भिन्न स्वरूप में देखने को मिलती है। अच्छी शिक्षा व रोजगार के परिणामस्वरूप महिलाओं में द्वन्द्व की स्थिति कम नहीं हुई है। एकाकी परिवारों में पति-पत्नी दोनों कार्यरत होने के कारण बच्चों की देखभाल से सम्बन्धित संघर्ष की स्थिति अधिक उत्पन्न होती है क्योंकि अधिकतर परिवार गाँव से प्रभावित होते हैं तो उनके मूल्य व विचार वही होते हैं, अतः गाँव हो या नगर घरेलू कार्यों, बच्चों की देखभाल इत्यादि की प्राथमिक जिम्मेदारी पत्नी की ही मानी जाती है।



टाइम्स यूज सर्वे (2024) के आँकड़ों के अनुसार 81% भारतीय शहरी महिलाएँ प्रतिदिन लगभग 289 मिनट 4 घण्टे एवं 49 मिनट से लेकर 5 घण्टे तक बिना वेतन वाले घरेलू कार्यों में अपना समय बिताती हैं, जबकि पुरुष मात्र 88 मिनट ही। विश्व आर्थिक मंच के ग्लोबल जेण्डर गैप रिपोर्ट 2025 के अनुसार 148 देश की सूची में भारत का स्थान 131वें स्थान पर है, जबकि 2024 में यह 129वें में स्थान पर था। यह स्थिति तब है जब दिनों-दिन कार्यबल में महिला अनुपात की वृद्धि हो रही है। शिक्षा, समानता एवं समान अवसर पर सरकार, विभिन्न एजेन्सियाँ लगातार सुधार की वकालत कर रही हैं। महिलाएँ पूरी दुनिया में आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हैं। ऐसे में अगर उनकी स्थिति समस्याओं मुद्दों व समाधान की ओर ध्यान नहीं दिया जाएगा

तो एक बेहतर समाज निर्माण में सफल नहीं हो सकते। इस सम्बन्ध में डॉ० भीमराव अम्बेडकर का कथन है “कि किसी भी समाज की प्रगति एवं उन्नति उसे समाज की महिलाओं द्वारा हासिल की गई प्रगति से मापा जाता जाना चाहिए।”

8. महिलाओं में भूमिका संघर्ष के प्रमुख कारण

महिलाओं में भूमिका संघर्ष के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं—

1. **पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था**—पितृसत्ता एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जिसमें शक्ति एवं अधिकार मुख्य रूप से पुरुषों के हाथों में होते हैं। यह केवल परिवार तक सीमित नहीं है बल्कि राजनीति, अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक नैतिकता के क्षेत्र में भी पुरुषों के वर्चस्व को दर्शाती है। रेडिकल नारीवादी समाजशास्त्री केट मिलेट कहती हैं कि पितृसत्ता एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है कि जहाँ आधा समाज (पुरुष) दूसरे आधे समाज (महिलाओं) पर शासन करता है। इसी से सम्बन्धित मानसिक स्वास्थ्य के अध्ययनों से पता चलता है कि उच्च भूमिका वाली महिलाओं में बर्नआउट एवं रोल ओवरलोड की समस्या उन महिलाओं में अधिक पाई जाती है जिन्हें फैमिली सपोर्ट कम मिलता है, दूसरा ग्लास सीलिंग (पुरुषों द्वारा महिलाओं के लिए एक अदृश्य दीवार खड़ी कर दी जाती है, जिसमें महिलाओं के बारे में मान लिया जाता है कि एक शादीशुदा महिला चुनौतीपूर्ण भूमिका नहीं निभा पाएगी)। जैसी व्यवस्था पितृसत्ता की ही देन है। यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा कि महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति उत्पन्न करने में पितृसत्ता एवं उससे उपजी लैंगिक असमानता मुख्य तौर पर जिम्मेदार है।
2. **लैंगिक असमानता**—लैंगिक असमानता कामकाजी महिलाओं के लिए एक दोहरी मार (Double whemmy) की तरह है जहाँ एक तरफ कार्यस्थल पर अपनी योग्यता साबित करने हेतु पुरुषों से अधिक परिश्रम करना पड़ता है तो दूसरी तरफ परिवार उनसे आदर्श बहु/पत्नी की उम्मीद करता है। यह दोहरापन ही महिलाओं में तनाव व संघर्ष की स्थिति को पैदा करता है। टॉलकट पार्सन्स जैसे दिग्गज समाजशास्त्रियों ने समाज के सन्तुलन हेतु पुरुषों की ‘इंस्ट्रूमेंट रोल’ (कमाउ) एवं महिलाओं की ‘एक्सप्रेसिव रोल’ (भावनात्मक/घरेलू) का तर्क दिया था। यही अनिवार्य रोल एवं स्थापित ‘अनिवार्य भूमिका’ आज कामकाजी महिलाओं में भूमिका तनाव (Role strain) पैदा कर रही है (हालाँकि आधुनिक समाजशास्त्रियों ने इसकी आलोचना की है) एक पुरुष अपने खाली समय का उपयोग आराम या नेटवर्क बढ़ाने में करते हैं, कुछ शौकिया काम पूरे करते हैं जबकि महिलाएँ उसे तीसरी शिफ्ट (Third shift, बच्चों की पढ़ाई, साफ-सफाई, खाना, देखभाल) के तौर पर इस्तेमाल करते हैं। प्रसिद्ध महिला समाजशास्त्री एन० ओकले का कहना है कि समाजीकरण के द्वारा बाल्यावस्था से ही हेर फेर (मैनिपुलेशन) एवं कैनलाइजेशन (बच्चों को लिंग के आधार पर प्रभावित करना) के माध्यम से लड़कियों को घरेलू कार्यों की ओर मोड़ा जाता है। जब यह लड़कियाँ बड़ी होकर कामकाजी महिला बनती हैं तो उनका अन्तर्मन (Internalized values) उन्हें घर के काम छोड़ने पर दोषी या अपराधबोध महसूस कराता है।
3. **कार्य में परिवार के बीच सन्तुलन की कमी**—कार्य एवं परिवार के बीच सन्तुलन की कमी ही भूमिका संघर्ष की स्थिति को उत्पन्न करती है। स्पिलओवर सिद्धान्त (हेराल्ड विलेनस्की) बताता है कि एक क्षेत्र का तनाव दूसरे क्षेत्र को प्रभावित करता है; जैसे दफ्तर की थकान या तनाव का घर पर चिड़चिड़ापन के रूप में निकलना। विभिन्न शोध बताते हैं कि पुरुषों का कार्य तनाव अक्सर घर पर स्वीकार्य माना जाता है जबकि महिलाओं का कार्य-तनाव को नजरअन्दाज कर दिया जाता है। एक रिपोर्टनुसार कार्य परिवार सन्तुलन न बन पाने वाली महिलाओं में चिन्ता एवं अनिद्रा की दर सामान पदों पर कार्यरत पुरुषों की तुलना में 40% अधिक है (Mental Health Foundation, 2024)।

कार्य एवं परिवार के बीच सन्तुलन की कमी को समाजशास्त्रीय भाषा में 'वर्क फैमिली कनफ्लिक्ट' के तौर पर जाना जाता है। भारतीय महिलाएँ प्रतिदिन औसतन 352 मिनट अवैतनिक देखभाल कार्यों में बिताती हैं, जबकि पुरुष मात्र 52 मिनट। यह 572 प्रतिशत का अन्तर ही कार्य परिवार सन्तुलन (WFC) को लगभग असम्भव बना देता है। लगभग 80% से अधिक कामकाजी महिलाएँ घर पहुँचने के बाद कम से कम 3 से 5 घण्टे घरेलू प्रबन्धन में लगाती हैं जिसे महिला समाजशास्त्री अर्ली होशचाइल्ड चाइल्ड ने 'सेकंड शिफ्ट' कहा है क्योंकि समाज निरन्तर बदल रहा है तथा अगर यह कहा जाए कि समाज में भौतिक परिवर्तन (तकनीकी अर्थव्यवस्था में होने वाला बदलाव जैसे महिलाओं का बाहर काम पर निकलना) तीव्र गति से हो रहा है जबकि गैर-भौतिक परिवर्तन (हमारे मूल्य व सोच अभी भी पुराने हैं) धीमी गति से हो रहे हैं। यहाँ विलियम आगबर्न का सांस्कृतिक पिछड़न सिद्धान्त सटीक बैठता है।

4. **समय एवं संसाधनों की कमी**—कार्य परिवार संघर्ष मात्र समय के प्रबन्धन की कमी ही नहीं है बल्कि यह संसाधनों एवं सामाजिक सहयोग के असमान वितरण का भी परिणाम है। पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं के पास परिवहन व नेटवर्किंग साधन कम होते हैं जिसके फलस्वरूप काम का दबाव पड़ता है। साथ ही, इन संसाधनों के अभाव में टाइम पॉवर्टी (Time Poverty) जैसी स्थिति उनके सामने उत्पन्न होती है। वर्तमान में प्रत्येक क्षेत्र में तकनीकी की विशेष भूमिका है। ऐसे में महिलाएँ अगर तकनीकी में कुशल नहीं होगी तो उनके सामने नए प्रकार की चुनौतियाँ उत्पन्न होगी। एक सर्वे के मुताबिक भारत में पुरुषों की तुलना में 15 से 20% कम महिलाओं के पास इण्टरनेट या स्मार्टफोन की पहुँच है, समय एवं संसाधनों का अभाव महिलाओं की प्रगति में बाधा पहुँचाने का कार्य भी करता है। यह आँकड़े आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (OECD) के 'जेण्डर, इंस्टीट्यूशंस एण्ड डेवलपमेण्ट डेटाबेस' एवं भारत सरकार के सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मन्त्रालय (MOSPI) द्वारा जारी 'टाइम यूज सर्वे' पर आधारित हैं।
5. **डिजिटल युग एवं 'ऑलवेज अवेलेबल' संस्कृति**—आधुनिक तकनीक ने महिलाओं के कार्य को आसान बनाने के बजाय कई बार चौबीस घण्टे उपलब्ध बने रहने का दबाव बढ़ा दिया है। 'वर्क फ्रॉम होम', 'ऑनलाइन मीटिंग', 'व्हाट्सएप ऑफिस ग्रुप' तथा 'डिजिटल निगरानी' (Digital surveillance) ने घर तथा कार्यस्थल की सीमाओं को उलझा सा दिया है। परिणामस्वरूप महिलाएँ 'भूमिका सीमाओं' (Role boundaries) को स्पष्ट रूप से अलग नहीं कर पातीं। समाजशास्त्री जुडी वाज्समैन का तर्क है कि तकनीक समय बचाने के बजाय लोगों के ऊपर 'तेजी तथा निरन्तर उपलब्धता' का दबाव बढ़ाती है। दूसरा, सोशल मीडिया के जमाने में महिलाओं पर सुन्दर दिखने का दबाव भी बढ़ा है। आज शायद ही कोई महिला होगी जो ब्यूटी पार्लर का इस्तेमाल न करती हो। ये दबाव कहीं न कहीं खुद को बेहतर दिखने का दबाव भी होता है।
6. **समर्थन प्रणाली का अभाव**—भारत में शहरीकरण के कारण संयुक्त परिवारों का विघटन हुआ है। परम्परागत तौर पर भारतीय समाज में बहनें, भाभियों या सास एक मजबूत सपोर्ट सिस्टम होते थे। आधुनिकता एवं गतिशीलता के कारण यह नातेदारी नेटवर्क कमजोर हुआ है। अब महिला को बाहरी सहायक-सहायिका पर निर्भर रहना पड़ता है जो खर्चीला होने के साथ-साथ भरोसे की कमी को भी दर्शाता है तथा जो तनाव का कारण बनता है। इसके अतिरिक्त, घर परिवार की साझा जिम्मेदारियाँ होने के बजाय घर की जिम्मेदारियों को पूरा करने का कार्य महिला का ही माना जाता है। समाजशास्त्री पामेला एबॉट के अनुसार महिलाएँ अक्सर भावनात्मक श्रम अकेले ही करती हैं। जब पति या ससुराल पक्ष से भावनात्मक एवं शारीरिक सहयोग नहीं मिलता तो महिला का भूमिका संघर्ष तीव्र हो जाता है। यदि पितृसत्तात्मक समाज में पुरुषों की भूमिका सहयोगी के बजाय साझेदारी की हो जाए तो समर्थन तन्त्र का यह अभाव स्वतः ही समाप्त हो जाएगा तथा भूमिका संघर्ष की स्थिति में कुछ कमी आएगी।



9. भूमिका संघर्ष का महिलाओं के मानसिक, पारिवारिक एवं व्यवसायिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव

उन महिलाओं के लिए भूमिका संघर्ष या भूमिका का टकराव एक बड़ी चुनौती है जो एक ही समय में घर सम्भालने वाली, माँ, देखभाल करने वाली एवं कामकाजी महिला के तौर पर कई भूमिकाएँ निभाती हैं। इन अलग-अलग उत्तरदायित्वों (जिम्मेदारियों) के बीच सन्तुलन बनाने में ग्रामीण एवं शहरी दोनों तरह की महिलाओं को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, हालाँकि इन चुनौतियों का स्वरूप एवं तीव्रता अलग-अलग हो सकती है। ये भूमिका संघर्ष या टकराव वाली माँगें उनके मानसिक स्वास्थ्य, पारिवारिक सम्बन्धों एवं काम के प्रदर्शन पर प्रभाव डाल सकती हैं। इन प्रभावों को समझने से महिलाओं के जीवन के व्यापक सामाजिक एवं लैंगिक पहलुओं की समझ मिलती है। महिलाओं के जीवन पर भूमिका संघर्ष के प्रभावों को मुख्य रूप से इन उप-शीर्षकों के अन्तर्गत समझाया गया है—

9.1 मानसिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव

तनाव, चिन्ता, अपराध-बोध, निराशा एवं भावनात्मक थकान के रूप में भूमिका संघर्ष ग्रामीण एवं शहरी दोनों तरह की महिलाओं के मानसिक जीवन को निम्नलिखित प्रकार से प्रभावित कर सकता है—

- भूमिका संघर्ष से तनाव, चिन्ता एवं भावनात्मक थकान होती है।
- भूमिका संघर्ष अपराध-बोध, अपर्याप्तता एवं निराशा की भावना पैदा करता है।
- भूमिका संघर्ष आत्मविश्वास एवं कुल मिलाकर मानसिक स्वास्थ्य को कम करता है।
- भूमिका संघर्ष के कारण एक-दूसरे से टकराती माँगों की वजह से 'बर्नआउट' (अत्यधिक थकान एवं तनाव) हो सकता है।

9.2 पारिवारिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव

ग्रामीण एवं शहरी दोनों तरह की महिलाओं को घरेलू उत्तरदायित्वों, बच्चों की देखभाल एवं परिवार की अन्य उत्तरदायित्वों को अपने काम की भूमिकाओं के साथ सन्तुलित करने में निम्नलिखित कठिनाई हो सकती है—

- भूमिका संघर्ष काम व पारिवारिक उत्तरदायित्वों के बीच सन्तुलन बनाने में कठिनाई पैदा करता है।
- भूमिका संघर्ष जीवनसाथी, बच्चों एवं परिवार के अन्य सदस्यों के लिए उपलब्ध समय को कम करता है।

- भूमिका संघर्ष पारिवारिक तनाव, असहमति एवं अन्तर्क्रिया में कमी का कारण बन सकता है।
- भूमिका संघर्ष बिना वेतन वाले घरेलू एवं देखभाल के काम का बोझ बढ़ाता है।

9.3 व्यवसायिक (पेशेवर) जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव

ग्रामीण एवं शहरी दोनों तरह की महिलाओं को एकाग्रता, उत्पादकता, नौकरी से सन्तुष्टि एवं करियर में तरक्की में कमी का सामना करना पड़ सकता है। दोनों तरह की महिलाओं के व्यवसायिक (पेशेवर) जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव निम्नलिखित हैं—

- भूमिका संघर्ष एकाग्रता, उत्पादकता एवं नौकरी से सन्तुष्टि को कम करता है।
- भूमिका संघर्ष पेशेवर समय-सीमा (डेडलाइन) एवं उम्मीदों को पूरा करने में कठिनाई पैदा करता है।
- भूमिका संघर्ष करियर में तरक्की, प्रमोशन एवं नेतृत्व के अवसरों को सीमित कर सकता है।
- भूमिका संघर्ष काम से अनुपस्थिति, काम में कम भागीदारी या नौकरी छोड़ने को बढ़ावा दे सकता है।

इस प्रकार, मूलभूत प्रभाव ग्रामीण एवं शहरी दोनों तरह की महिलाओं के लिए समान हैं, हालाँकि भूमिका संघर्ष के स्रोत एवं तीव्रता अलग-अलग हो सकते हैं। ग्रामीण एवं शहरी महिलाओं के बीच भूमिका संघर्ष के सन्दर्भ में कुछ अन्तर भी हैं। ग्रामीण महिलाओं में भूमिका संघर्ष का सम्बन्ध ज्यादातर खेती के काम, घरेलू उत्तरदायित्वों, सीमित रोजगार के अवसरों, अपर्याप्त बुनियादी सुविधाओं एवं पारम्परिक लैंगिक अपेक्षाओं से हो सकता है। इसके विपरीत, शहरी महिलाओं में भूमिका संघर्ष मुख्य रूप से औपचारिक रोजगार, काम के लम्बे घण्टे, आने-जाने (कम्यूटिंग), पेशेवर प्रतिस्पर्धा, बच्चों की देखभाल एवं करियर के साथ-साथ घरेलू उत्तरदायित्वों (जिम्मेदारियों) को सम्भालने से पैदा हो सकता है।

अतः, भूमिका संघर्ष का प्रभाव ग्रामीण एवं शहरी, दोनों तरह की महिलाओं की मानसिक, पारिवारिक एवं व्यवसायिक जीवन पर पड़ता है, हालाँकि उनकी सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के हिसाब से इसके रूप अलग-अलग हो सकते हैं। लगातार एक-दूसरे से टकराती माँगों की वजह से तनाव, भावनात्मक दबाव, पारिवारिक कलह एवं करियर में आगे बढ़ने में मुश्किलें आ सकती हैं। ग्रामीण महिलाओं को पारम्परिक भूमिकाओं एवं सीमित संसाधनों की वजह से अतिरिक्त चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है, जबकि शहरी महिलाओं को अक्सर नौकरी एवं समय के प्रबन्धन (Time management) के दबाव का सामना करना पड़ता है। भूमिकाओं के टकराव से निपटने के लिए परिवार के ज्यादा सहयोग, काम की जगह पर लचीलेपन एवं मददगार सामाजिक ढाँचे की आवश्यकता होती है।

10. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों की कामकाजी महिलाएँ बहुआयामी भूमिकाओं के कारण भूमिका संघर्ष की स्थिति का सामना कर रही हैं। पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना, लैंगिक असमानता, समय एवं संसाधनों की कमी तथा कमजोर समर्थन प्रणाली ने इस संघर्ष को और अधिक जटिल बना दिया है। जहाँ शिक्षा एवं रोजगार ने महिलाओं को आर्थिक एवं सामाजिक सशक्तिकरण प्रदान किया है, वहीं पारिवारिक दायित्वों का असमान वितरण उनके मानसिक, पारिवारिक एवं व्यावसायिक जीवन को प्रभावित कर रहा है। अतः आवश्यक है कि सामाजिक सोच, पारिवारिक संरचना एवं नीतिगत स्तर पर सकारात्मक परिवर्तन किए जाएँ।

11. महिलाओं में भूमिका संघर्ष को कम करने के लिए सुझाव

प्रस्तुत सुझाव कार्यरत महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं—

1. महिलाओं में घरेलू कार्यों का पुनर्वितरण किया जाना चाहिए। सहायता के बजाय साझेदारी की भावना को विकसित किया जाना चाहिए। साथ ही, परिवारों में श्रम का विभाजन लैंगिक आधार पर न होकर क्षमता तथा समय के आधार पर तय होना चाहिए।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति से निपटने के लिए परिवार के सदस्यों द्वारा घरेलू कार्यों को साझी जिम्मेदारियाँ उठानी चाहिए तथा परम्परागत मूल्यों में आवश्यकता अनुसार लचीलापन लाना चाहिए। लैंगिक असमानता तथा डिजिटल लैंगिक अन्तराल को ग्रामीणों के साथ खत्म करने का प्रयास करना चाहिए।
3. सुपर वुमन व आदर्श गृहणी के दबाव को कम करने एवं 'स्वार्थी' या 'खराब माँ' जैसी सोच को चुनौती देना जरूरी है। मीडिया एवं शिक्षा के माध्यम से 'सफल महिला' की नई परिभाषा बनानी चाहिए।
4. पितृत्व अवकाश कानून को आवश्यक रूप से लागू करना चाहिए तथा इसके लिए सामाजिक जागरूकता बढ़ानी चाहिए।
5. कार्यस्थल पर क्रैच की सुविधा होनी चाहिए तथा सपोर्ट सिस्टम को मजबूत बनाना होगा।
6. महिलाओं को अपनी मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य को प्राथमिकता देने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

सन्दर्भ-सूची

(अ) पुस्तकें एवं सिद्धान्त

एबॉट, पी०, वालेस, सी०, एवं टायलर, एम०, *समाजशास्त्र का परिचय : नारीवादी परिप्रेक्ष्य* (तृतीय संस्करण). न्यू यॉर्क: रूटलेज, 2005.

देसाई, नीरा, *भारतीय समाज में महिला*, नई दिल्ली: मेंकमिलन इंडिया, 1994.

दुबे, लीला, लैंगिक अध्ययन के मानवशास्त्रीय आयाम, नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स, 2001.

मर्टन, रॉबर्ट के०, *सामाजिक सिद्धान्त एवं सामाजिक संरचना*, ग्लेनको, इलिनोइस: फ्री प्रेस, 1957.

ओकले, ऐन०, *घरेलू कार्यों का समाजशास्त्र*, न्यू यॉर्क: पेंथियन बुक्स, 1974.

आगबर्न, विलियम एफ०, *संस्कृति एवं मानव प्रकृति के सन्दर्भ में सामाजिक परिवर्तन*, न्यू यॉर्क: बी० डब्ल्यू० ह्यूब्स, 1922.

वाल्बी, सिल्विया, *पितृसत्ता का सिद्धान्तकरण*, ऑक्सफोर्ड, यूनाइटेड किंगडम: बेसिल ब्लैकवेल, 1990.

(ब) शोध लेख एवं जर्नल

आशा, एल०, "कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष एवं पारिवारिक समर्थन का समाजशास्त्रीय अध्ययन", *अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान पत्रिका*, 3(2), 2014, 45-52।

गुडे, विलियम जे०, "भूमिका तनाव का सिद्धान्त", *अमेरिकन समाजशास्त्रीय समीक्षा*, 25(4), 1960, 483-496.

नायर, उषा, "कामकाजी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर भूमिका संघर्ष का प्रभाव", *भारतीय जेंडर अध्ययन पत्रिका*, 2007, 421-435.

पूजा शर्मा, "कार्यरत महिलाओं में भूमिका संघर्ष एवं कार्य-संतुष्टि का अध्ययन", *सामाजिक अनुसंधान पत्रिका*, 2020, 7(2), 55-63.

रानी एवं त्यागी, "ग्रामीण एवं शहरी कामकाजी महिलाओं में भूमिका तनाव का तुलनात्मक अध्ययन", *अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान एवं विश्लेषणात्मक समीक्षा पत्रिका*, 2020, 112-118.

शालिनी सिंह, "शहरी कार्यरत महिलाओं में कार्य-परिवार संघर्ष की समस्या", *भारतीय समाजशास्त्रीय समीक्षा*, 2018

ग्रीनहॉस, जे० एच०, एवं ब्रूटल, एन० जे०, "कार्य एवं परिवार भूमिकाओं के मध्य संघर्ष के स्रोत", *प्रबंधन समीक्षा पत्रिका*, 10(1), 1985, 76-88।

देशपांडे, अश्विनी, “कोविड-19 महामारी एवं लॉकडाउन का रोजगार एवं घरेलू कार्यों में लैंगिक असमानताओं पर प्रभाव”, *अशोका विश्वविद्यालय आर्थिक विमर्श पत्र*, 2 जून, 2020.

(स) सरकारी एवं अन्तर्राष्ट्रीय रिपोर्ट

इण्टरनेशनल इंस्टीट्यूट फॉर पॉपुलेशन साइंसेज, 2021.

केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मन्त्रालय, *राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5), 2019-21*,

सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मन्त्रालय, *भारत में समय उपयोग सर्वेक्षण, 2019*, मुम्बई : अन्तर्राष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान, 2020.

सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मन्त्रालय, *आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण वार्षिक रिपोर्ट 2022-23*, नई दिल्ली: सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मन्त्रालय, 2023.

वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम, *वैश्विक लैंगिक अन्तर रिपोर्ट 2023*, जिनेवा, स्विट्जरलैंड: वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम, 2023. ★